Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 15, Issue 1, Jan-March – 2025 Special Issue 1
Impact Factor: 7.665, Peer Reviewed and UGC CARE I

हिंदी साहित्य में स्त्री रूप की यात्रा - भाग्या से भोग्या तक

प्रा. एम. जी. ठाकरे, शोध छात्र, क. ब. चौ. उ. म. वि.,जलगाव
प्रा. डॉ. प्रमोद गोकुळ पाटील, शोध निर्देशक, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग एवं संशोधन केंद्र,
श्री. शिवाजी विद्या प्रसारक संस्था का अली ना. स. पाटील साहित्य एवं मुल्ला फिदा अली मुल्ला अब्दुल अली वाणिज्य महाविद्यालय, देवपुर, धुले (महाराष्ट्र)

प्रस्तावना

हिंदी साहित्यकारों ने शुरुआती दौर में स्त्री के उपर होनेवाले अन्याय-अत्याचार का यथार्थ वर्णन किया है। हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टि डालें तो यह दिखाई देता है कि, स्त्री किसी-न-किसी रूप में साहित्य के केंद्र में रहकर चित्रित होती रही है। मैथिलीशरण गुप्त की दृष्टि में स्त्री दीनता की प्रतिमूर्ति है। प्रसादयुग में आकर पुरुष ने स्त्री को पहचाना उनकी स्त्री केवल श्रद्धा है, जिसने अपना सर्वस्व, अपने जीवन के सभी सपने, अपने संकल्प अनुओं से दान कर दिए। वह श्रद्धेय है। दिनकर के युग तक आते-आते स्त्री स्वच्छंद, मुक्त, भोगी, अप्सरा बन गई, जिसका बसेरा न जाने कितनों की चाह में है, कितनों के आगोश में है।

साहित्य में स्त्री-रूप-चित्रण की यात्रा आदर्श भारतीय रूप से होते हुए मुक्त जीवन तक पहुँची है। स्त्री सृष्टि की मूल है। पुरुष की जीवन-संगिनी है। वह माँ है, पत्नी है, प्रेयसी है, पुत्री है, देवी भी है और दानवी भी। स्त्री-शिक्षा, समानता के कानून और समानता के अधिकार प्राप्त कर स्त्रियों ने स्वैराचार का तांडव आरंभ किया है। यह एक प्रकार का प्रतिशोध है, जो स्त्री सालों से पुरुष के आधिपत्य में दबती आई थी, वह न्यायिक अधिकार पाकर मुक्त हुई है, जो साहित्य से अनछुई न रह सकी।

मुख्य संबोध : रंगमंच, आदिकाल, पूर्णत्व, विषकन्या, कामांधा, पवित्रता, जीवन-संगिनी, जीवन-रथ, स्त्रीवादी साहित्य, वैदिककाल एवं बसेरा आदि।

विषय प्रवेश

हिंदी साहित्यकारों ने शुरुआती दौर में स्त्री के उपर होनेवाले अन्याय-अत्याचार का यथार्थ वर्णन किया है। 1975 के पश्चात् साहित्य के क्षेत्र में पाश्चात्य संकल्पना 'फेमिनिज्म' का प्रभाव दिखाई देता है। परिणामस्वरूप स्त्री को केंद्र में रखकर स्त्रीवादी साहित्य का निर्माण हुआ। वैदिककाल से स्त्री साहित्य के केंद्र में रही है। हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टि डालें तो यह दिखाई देता है कि, स्त्री किसी-न-किसी रूप में साहित्य के केंद्र में रहकर चित्रित होती रही है। तुलसीदास कहते हैं-

"बोल गँवार शूद्र पशु नारी,
सकल ताड़ना के अधिकारी।"[१]

मैथिलीशरण गुप्त की दृष्टि में स्त्री दीनता की प्रतिमूर्ति है, जिसके आँचल में दूध और आँखों में पानी है-

"अबला जोवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।"[२]

प्रसादयुग में आकर पुरुष ने स्त्री को पहचाना उनकी स्त्री केवल श्रद्धा है, जिसने अपना सर्वस्व, अपने जीवन के सभी सपने, अपने संकल्प अनुओं से दान कर दिए। वह श्रद्धेय है। उसे जीवन को सुंदर बनाना है-

"क्या कहती हो ठहरो नारी

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 15, Issue 1, Jan-March – 2025 Special Issue 1
Impact Factor: 7.665, Peer Reviewed and UGC CARE I

संकल्प अश्रुजल से अपने
तुम दान कर चुकीं पहले ही
जीवन के सोने से सपने
नारी। तुम केवल श्रद्धा हो।"[३]

दिनकर के युग तक आते-आते स्त्री स्वच्छंद, मुक्त, भोगी, अप्सरा बन गई, जिसका बसेरा न जाने कितनों की चाह में है, कितनों के आगोश में है।

"अपना है आवास न जाने कितनों की चाहों में
कैसे हम बंध रहे किसी स्त्री नर की दो बाहों में।"[४]

स्त्री मुक्त जीवन चाहती है। प्रेम के एक क्षण के लिए वह किसी से बँधना नहीं चाहती। वह मातृत्व से घृणा करती है, वह केवल एक प्रेम के कारण गर्भ की कुरूपता नहीं सहन कर सकती।

"किरणमयी यह परी करेगी यह विरूपता धारण
वह भी और नहीं कुछ, केवल एक प्रेम के कारण ।"[५]

दिनकर की उर्वशी स्वच्छंद है, जो वर्तमानकालीन स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। काव्य-विधा में चित्रित स्त्री की यात्रा उसके वास्तविक जीवन की यात्रा है। स्त्री के व्यक्तित्व में आए हुए परिवर्तन की वास्तविकता साहित्य की अनेक विधाओं-कहानी, कथा, उपन्यास, नाटक आदि में देखने को मिलती है। युगों की यात्रा ने स्त्री को साहित्य और समाज की मुख्य नायिका बना दिया। स्त्री में आए परिवर्तनों से साहित्य अछूता न रह सका।

जैनेंद्रकुमार, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय आदि कहानिकारों ने स्त्री की मानसिकता का चित्रण किया है। यशपाल ने पूँजीवादी व्यवस्था में स्त्री के हो रहे शोषण को 'मृत्युंजय' कहानी में चित्रित किया है। रांगेय राघव तथा अज्ञेय ने क्रमशः गदल, हारिति, विपथगा, रोज कहानियों के द्वारा विद्रोही स्त्री को आँका है। राजेंद्र यादव की 'टूटना', रामकुमार भ्रमर की 'लौ पर हथेली' मणि मधुकर की 'प्रतिपक्ष' कहानियाँ समकालीन पति-पत्नी के संबंधों की दरारों को दर्शाती है। कामकाजी स्त्री की समस्या को देवेंद्र इस्सर की 'वह एक क्षण' कमलेश्वर की 'तलाश' कहानी में व्यक्त किया गया है।इन प्रमुख कहानीकारों के अतिरिक्त ऐसे कई कहानीकार हैं, जिन्होंने स्त्री को केंद्र में रखकर कहानियों का सृजन किया है।

हिंदी साहित्य में नाटकों का वास्तविक आरंभ भारतेंदुकाल से ही माना जाता है। इस युग को आधुनिक नाट्य-साहित्य में नवजागरण तथा नव सांस्कृतिक चेतना का युग माना जाता है। इस युग में जन सामान्य में राष्ट्रीय भावना के उदय के साथ-साथ धार्मिक और सामाजिक जागरूकता आयी। जागृति के इस युग में जनचेतना के लिए नाटक यह माध्यम प्रभावी सिद्ध हुआ है। भारतेंदु तथा उनके समकालीन नाटककारों ने जीवन के प्रत्येक पहलुओं को नाटक में चित्रित किया है। इसी युग में स्त्री-जागरण प्रारंभ हुआ, स्त्री-शिक्षा पर विशेष बल दिया गया। ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज और रामकृष्ण मिशन जैसी धार्मिक सुधारवादी संस्थाओं का समाज और स्त्रीवर्ग पर अधिक प्रभाव हुआ है।

भारतेंदुयुग समाज जागृति का युग था। इस काल में स्त्री की शिक्षा और स्वाधीनता पर विशेष ध्यान दिया जा रहा था, किंतु समाज रूढ़ियों से अलग न हो पाया था। भारतेंदु के नाटकों में स्त्री 'आदर्श भारतीय स्त्री' के रूप में चित्रित है। वह अपने कर्तव्य के प्रति प्रतिवद्ध दिखाई देती है। वह अपने आदर्श को उपस्थित करती है। जैसे 'सत्य हरिशचंद्र' नाटक की शेव्या पतिभक्त, नारी-सुलभ लज्जा की प्रतिमूर्ति है। विद्यासुंदर की

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 15, Issue 1, Jan-March – 2025 Special Issue 1
Impact Factor: 7.665, Peer Reviewed and UGC CARE I

विधा में प्रेम की एकनिष्ठता, धैर्य, शील और विनोद आदि गुणों का समन्वय है। इस युग के नाटकों में स्त्री भावुक, प्रेमिका, गृहिणी, त्यागमयी, पतिपरायण, दलित और दमित आदि अनेक रूपों में देखने को मिलती है।

जयशंकर प्रसाद का नारी के प्रति दृष्टिकोण 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो' वाला है। इनके ऐतिहासिक नाटकों द्वारा स्त्री भावना का परिचय मिलता है। 'राज्यश्री' की नायिका आदर्श रूप में चित्रित है, जो अपना वैधव्य का जीवन अपने प्रबल मनोबल से, सात्त्विकता से व्यतीत करती है। प्रसाद ने अपने नाटकों में नारी के कोमल और कठोर दोनों रूपों का चित्रण किया है। 'विशाखा' की चंद्रलेखा ममत्व के साथ निर्भीक है। प्रसादयुगीन नाटकों में स्त्री भारतेंदुयुगीन नाटकों की स्त्री जैसे अन्याय-अत्याचारों को मौन रूप में नहीं सहती। वह अपनी स्वतंत्रता, आत्मसम्मान का अधिकार माँगती है। प्रसाद जी के समकालीन नाटककार लक्ष्मीनारायण मिश्र के नाटकों में स्त्री का रूप आधुनिकता के बोध से प्रभावित है। इनके नाटकों में स्त्री के संघर्ष, आत्मसम्मान, चातुर्य, प्रेम, त्याग और दुर्बलता का चित्रण है। मिश्रजी के नाटकों में नारी पुरुष से तर्क करती है, उन्हें ललकारती है और आत्मरक्षा के लिए संघर्ष करती है। वह स्वाभिमानी है। 'सिंदूर की होली' की चंद्रकला प्राचीन वैवाहिक परंपरा के प्रति विद्रोह करती है। 'राजयोग' की चंपा स्पष्टवादिनी है।[६] 'संन्यासी' की मालती रोमांटिक प्रेम को भूलकर कर्तव्य-पथ पर चलने की प्रेरणा विश्वकांत को देती है। इस रूप में मिश्र जी के नाटकों की स्त्री परंपरागत एवं आधुनिक गुणों से युक्त है।

लक्ष्मीनारायण लाल के 'रातरानी' की कुंतल को पति के कहने पर अनिच्छा से नौकरी करनी पड़ती है। पति उसके पैसों से क्लब में जुआ खेलता है। समाज की एक खासियत रही है कि वह हर समस्या की जड़ स्त्री को ही मानता है। उदाहरणस्वरूप 'संतानहीनता'। वैद्यकीय शास्त्र इस बात को सिद्ध कर चुका है कि संतान न होना यह स्त्री का नहीं, बल्कि पुरुष का दोष होता है। इसके बावजूद सारा दोषारोपण स्त्री पर किया जाता है। लक्ष्मीनारायण लाल के 'अंधा कुँआ' कि सुखिया संतानहीनता के कारण आत्महत्या के लिए प्रवृत्त होती है।[७] सुरेंद्र वर्मा के 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' का राजा ओक्कांक नपुंसक है, किंतु संतानहीनता का दुःख उसकी पत्नी शीलवती भोगती है।

लक्ष्मीनारायण लाल के 'रातरानी', कमलेश्वर की 'अधूरी आवाज' में दहेज समस्या का चित्रण है। प्रौढ़ कुमारी की समस्या आज प्रमुखता से देखने को मिलती है। परिवार की जिम्मेदारी, शिक्षा आदि के कारण लड़कियों की शादी नहीं हो पाती। शाति मेहरोत्रा के 'ठहरा हुआ पानी' नाटक में सीता प्रौढ़ कुमारी है, जो घुट-घुटकर जीती है। समकालीन नाटकों में कुँवारी माता का चित्रण है, जो अपने तथाकथित लांछित मातृत्व को बोझ नहीं समझती। समकालीन स्त्री परंपरागत नारियों के समान गर्भपात नहीं करती। शंकर शेष के 'मूर्तिकार', जगदीशचंद्र माधुर के 'कोणार्क' की नायिका नीलू और सारिका प्रेमी से प्राप्त गर्भ को जन्म देती हैं। इन स्त्रियों का अविवाहित होते हुए यह कार्य साहसी है।

अंधविश्वासों की बलि आज भी स्त्री बनती है। जैसे-विष्णु प्रभाकर के 'बंदिनी' नाटक की उमा। मृदुला गर्ग के 'एक और अजनबी' नाटक की शानी पति की तरक्की के लिए अपना उपयोग नहीं करने देती। जबकि पति का बॉस उसका पूर्वप्रेमी है। शानी को पूर्वप्रेमी में भी केवल एक पुरुष ही दिखाई देता है। आज स्त्री परंपराओं के बंधनों में नहीं रहना चाहती वह वर्जनाओं के प्रति विद्रोह करती है। 'कर्फ्यू' की मनीषा तथा देवयानी का कहना है कि देवयानी बंधन को नहीं मानती, वह मातृत्व की अपेक्षा संभोग को महत्त्व देती है। मुक्त संभोग को वह महत्त्व देती है। 'वन एपल इस नॉट इनफ फॉर दी होल लाइफ टेस्ट मोर।"[८]

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 15, Issue 1, Jan-March – 2025 Special Issue 1
Impact Factor: 7.665, Peer Reviewed and UGC CARE I

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' की शौलवती अपने कामपूर्ति के अधिकार के लिए ललकार उठती है, "कितनी ही युवतियाँ हैं, जो ब्याह से पहले ही कुँवारी नहीं रहती... और मैं ब्याहता होकर भी ब्रह्मचारिणी थी... लेकिन कब तक? मैं एक मामूली स्त्री हूँ। जब शरीर के माध्यम से जीती हूँ, तो शरीर की माँगों को नकार सकती हैं।"[९] इतना ही नहीं तो नियोग द्वारा अपने पूर्वप्रेमी से काम तृप्ति पाने पर 'शीलावती' का जीवन दर्शन ही बदल जाता है। वह कहती है- "नारी की सार्थकता मातृत्व में नहीं महामात्य संभोग में है। केवल पुरुष के इस संयोग के सुख में.... मातृत्व केवल गौण उत्पादन है... जैसे (दही से निकलता तो केवल माखन है, लेकिन तलछट में थोड़ी छाँछ बच जाती है। 'युगे युगे क्रांति' के निष्कर्ष में कहें तो स्त्री के लिए पति अनिवार्य नहीं, पुरुष अनिवार्य है।"[१०]

समकालीन नाटकों में कुछ स्त्रियाँ सेक्स से अतृप्त दिखाई देती हैं। 'मुद्राराक्षस' के 'तेंदुआ' की रेणु और मिसेज मदान यौन विकृति की शिकार हैं। 'आधे अधूरे' की सावित्री अर्थ और काम से अतृप्त है। समकालीन नाटकों में स्त्री समस्याओं का समाधान ढूँढती दिखाई देती है, जैसे-परित्यक्ता स्त्री दूसरा विवाह कर पुनः अपना जीवन शुरू करती है। विधवा स्त्री पुनर्विवाह करती है। लक्ष्मीनारायण लाल के 'मादा कैक्टस' में अरविंद सुजाता को त्याग देता है, वह दूसरा विवाह करती है। रमेश मेहता के 'अपराधी कौन' नाटक की उषा बाल विधवा होकर अपने साथी सुधीर से विवाह करती है। 'युगे युगे क्रांति' का प्यारेलाल विधवा कलावती से विवाह करता है। समकालीनता में स्त्री पुरुष की बराबरी में बाहर की दुनिया में प्रतिकूल परिस्थिति का सामना करती दिखाई देती है, किंतु आज भी उसके हृदय के कोने में वह एक भावुक प्रेमिका को संजोए रखती है। समकालीन स्त्री अपने ऊपर होते अत्याचार को चुपचाप सहती नहीं, वह उसका प्रतिशोध लेती है।

निष्कर्ष

१. साहित्य में स्त्री-रूप-चित्रण की यात्रा आदर्श भारतीय रूप से होते हुए मुक्त जीवन तक पहुँची है। स्त्री सृष्टि की मूल है। पुरुष की जीवन-संगिनी है। वह माँ है, पत्नी है, प्रेयसी है, पुत्री है, देवी भी है और दानवी भी।
२. मुक्त जीवन की परिणति प्रतिशोध की भावना में हुई। अर्थात् सती सावित्री से लेकर कामांध स्त्री तक की उसकी यात्रा जीवन और समाज में आए परिवर्तन का यथार्थ रूप प्रस्तुत करती है।
३. स्त्री-शिक्षा, समानता के कानून और समानता के अधिकार प्राप्त कर स्त्रियों ने स्वैराचार का तांडव आरंभ किया है। यह एक प्रकार का प्रतिशोध है, जो स्त्री सालों से पुरुष के आधिपत्य में दबती आई थी, वह न्यायिक अधिकार पाकर मुक्त हुई है, जो साहित्य से अनछुई न रह सकी।
४. पवित्रता का निराला आदर्श प्रस्तुत करनेवाली सती भी है और कामांधा कुटिलता से भरी हुई विषकन्या भी। स्त्री अनेक रुपों में मानव जीवन को चिरकाल से प्रभावित करनेवाली एक अनबूझ पहेली रही है।
५. भारतीय जीवन पद्धति प्रायः अध्यात्मिक चेतना से अभिभूत रही है। भारतीय दर्शन प्रकृति और पुरुष के संयोग से सृष्टि की उत्पत्ति मानता है। उसके अनुसार नारी प्रकृति रूपी है। वह जीवन-रथ का चक्र है।
६. जीवन के रंगमंच पर जिस प्रकार स्त्री-पुरुष की उपस्थिति अनिवार्य है। उसी प्रकार साहित्य में भी अनिवार्य है।
७. स्त्री के बिना साहित्य के पूर्णत्व की कल्पना अपूर्ण है। आदिकाल से लेकर अब तक साहित्य में स्त्री का चित्रण विविध रुपों में होता रहा है। युगीन वातावरण के परिणामस्वरूप स्त्री-चित्रण की दृष्टि में पर्याप्त अंतर परिलक्षित होता है।

संदर्भ ग्रंथ

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 15, Issue 1, Jan-March – 2025 Special Issue 1
Impact Factor: 7.665, Peer Reviewed and UGC CARE I

१. वाशिष्ठ डॉ. सरिता, रामचरितमानस से उद्धृत, युगबोध और हिंदी नाटक (स्वातंत्र्योत्तर), पृ. क्र. ८७
२. प्रसाद जयशंकर, कामायनी, पृ. क्र. ११४
३. दिनकर, उर्वशी, पृ. क्र. १६
४. ढेरीवाला डॉ. मो. अजहर,आधुनिक हिंदी उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का चित्रण, पृ. क्र. ३२
५. प्रभाकर विष्णु, टगर, पृ. क्र. ६९
६. बक्षी रमेश, देवयानी का कहना है, पृ. क्र. १३४
७. वर्मा सुरेंद्र, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृ. क्र. ७२
८. प्रभाकर विष्णु, युगे युगे क्रांति, पृ. क्र. ६७
९. गिरिराजकिशोर, प्रजा ही रहने दो, पृ. क्र. ५७
१०. उपरोक्त, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृ. क्र. ७६

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved